बंद क्यों है इस्लाम में बदलाव के दरवाजे

मोहम्मद साहब ने इस्लाम का पैगाम अरब दुनिया के इतिहास के उस मुकाम पर दिया, जब कबीलाई समाज भयंकर उच्छृंखलता के दौर में था। उन्होंने इस्लाम के जरिए तत्कालीन समाज में एक व्यवस्था पैदा करने की कोशिश की। जो उस क्षेत्र में समाज सुधार की लम्बी छलांग थी। इसको इस एक बात से भी समझा जा सकता है कि बलात्कारियों के लिए पत्थर मारकर हत्या करने का प्रावधान किया। वह भी सार्वजनिक रूप से ताकि बलात्कार के अपराध की विकरालता का एहसास आम समाज कर सके।

बलात्कार एक असामान्य अपराध है। सभ्यता के प्रादुर्भाव के साथ सभ्य समाजों के लिए यह कलंक की बात रही है। हमारी सभ्यता का इतिहास प्राचीनतम है। हमारे यहां हजारों साल पहले की एक उक्ति विशेष हैं जो कमोबेश आज भी प्रचलित हैं। इसका अर्थ है, जहां महिलाओं की पूजा होती है, वहां देवताओं का वास होता है। दूसरे की पत्नी मातृवत है। आज भी हमारे यहां गांवों में गांव की बेटी-बहू पूरे गांव की बेटी-बहू होती है। अनजान प्रौढ़ महिला को माताजी कहकर पुकारा जाता है। कम उम्र की लड़कियों को बहन का सम्बोधन दिया जाता है। यह सब सुसंस्कृत मन और सभ्य व्यवहार की कसौटियां हैं। लेकिन आज पाश्चात्य भोगवादी और व्यक्तिवादी चिंतन के कारण स्त्री-पुरुष रिश्तों में अराजकता और जंगलीपन का बोलबाला बढ़ रहा है। नारी स्वतंत्रता के नाम पर उसे घोर परतंत्रता की जकड़न में बांधा जा रहा है। वह भोग्या बनकर रह गई है। सारे संसार में उपभोक्तावाद के तूफान में कामुकता को इस हद तक बढ़ा दिया गया है कि वह धर्म और अर्थ पर भारी पड़ रही है। यह पूरे समाज और सभ्यता के लिए आमतौर पर सबसे बड़ा संकट है। स्वाभाविक रूप से इस्लामिक दुनिया के विचारक इससे बहुत चिंतित हैं।

मोहम्मद साहब ने इस्लाम का पैगाम अरब दुनिया के इतिहास के उस मुकाम पर दिया, जब कबीलाई समाज भयंकर उच्छृंखलता के दौर में था। उन्होंने इस्लाम के जरिए तत्कालीन समाज में एक व्यवस्था पैदा करने की कोशिश की। जो उस क्षेत्र में समाज सुधार की लम्बी छलांग थी। इसको इस एक बात से भी समझा जा सकता है कि बलात्कारियों के लिए पत्थर मारकर हत्या करने का प्रावधान किया। वह भी सार्वजनिक रूप से ताकि बलात्कार के अपराध की विकरालता का एहसास आम समाज कर सके। मैं इस पर अधिकारपूर्वक कुछ नहीं कह सकता कि बाद में इस्लाम में उत्तरोत्तर सुधार की गुंजाइश के सारे दरवाजे क्यों बंद कर दिए गए या कि बाद में न्यस्त स्वार्थ के लोगों ने लकीर के फकीर बनने और बनाने का फौलादी शिकंजा कस दिया।

बलात्कार और इस्लाम की चर्चा इस आलेख में मैं एक खास वजह से कर रहा हूं। भारत और पाकिस्तान में इन दिनों दो जघन्य और घृणित बलात्कार की घटनाओं पर बहस हो रही है। पहले पाकिस्तान की घटना। पाकिस्तान में एक कबिलाई परिसर में मुख्तारन माई को इस वजह से सामूहिक बलात्कार की सजा सुनाई क्योंकि उसके भाई ने कोई अपराध किया था। मगर इस महिला ने लड़ने का फैसला किया और न्याय की गुहार लगाई। पाकिस्तान के अखबारों ने इस घटना को जबरदस्त ढंग से उजागर किया। पाकिस्तान के मानवाधिकारवादी संगठनों ने उसकी मदद की। सामूहिक बलात्कारियों में से बहुतों को कड़ी सजा मिली। लेकिन अदालती कार्यवाही के दौरान कालांतर में सब छूट गए। कबाइली परिषद के बर्बर और विचित्र न्याय पर अन्तरराष्ट्रीय मीडिया में भी बड़ी चर्चा हुई। एमनेस्टी इंटरनेशनल और पाकिस्तानी-अमेरिकी लोगों ने मुख्तारन माई को अमेरिका में आमंत्रित किया। लेकिन वाशिंगटन में पाकिस्तान के राजदूत जहांगीर करामात के आग्रह पर पाकिस्तान के गृह मंत्रालय ने मुख्तारन का नाम उस सूची में डाल दिया जिन्हें विदेश जाने की इजाजत नहीं होगी। उधर न्यूयार्क टाइम्स के एक स्तंभकार ने एक लाख तीस हजार डॉलर एकत्र किए ताकि वह पाकिस्तान आकर मुख्तारन माई की मदद कर सके। मगर उसे पाकिस्तानी सरकार ने वीसा नहीं दिया। इधर मुख्तारन के साथ सामूहिक बलात्कार करने वाले सब छूट गए थे। लेकिन पाकिस्तान के सर्वोच्च न्यायालय ने मुख्तारन के साथ बलात्कार करने वाले तमाम तेरह अपराधियों के विभिन्न अदालतों से छूट जाने के बाद फिर से गिरफ्तार करने का आदेश जारी कर दिया।

यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि मुख्तारन माई का तेरह साल का छोटा भाई अपनी से ऊंची जाति की किसी लड़की से प्यार करने का अपराध किया था। इस पूरे ब्यौरे से साफ है कि पाकिस्तान के कबिलाई समाज के इस तथाकथित न्याय से पाकिस्तान की सरकार पानी पानी होती नजर आ रही है। अन्तरराष्ट्रीय जगत में और अधिक शर्मिन्दगी होने देना नहीं चाहती। इसे मुख्तारन माई की शर्मिन्दगी की कोई परवाह नहीं। पाकिस्तान के दो प्रदेशों में कट्टरपंथी इस्लामिक जमातों का शासन है।

इससे थोड़ा हटकर एक घटना भारत के पश्चिमी उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर जिले में हुई है। २६ वर्षीय इमराना नाम की पांच बच्चों की मां के साथ उसके सगे ससुर ने बलात्कार किया। उसका पति शहर में रिक्शा चलाता है। और उधर गांव में उसके साथ यह कुकर्म हो गया। अंसारियों की पंचायत बैठी। उन्होंने शरियत के मुताबित फैसला दिया कि वह अपने ससुर को पति स्वीकार कर ले और पति को अपना बेटा। इसी हालत में वह गांव में रह सकती है। इमराना के लिए स्वाभाविक रूप से यह अकल्पनीय था। उसने अंसारी पंचायत का फतवा मानने से इनकार कर दिया। पति नूर इलाही ने तो पहले उसके साथ रहने से इनकार किया लेकिन बाद में प्रचार और जनसमर्थन को देखकर अपनी बेकसूर पत्नी के साथ रहना स्वीकार किया। अब मामले के बीच में पड़ने की बारी देवबंद के इस्लामी उलेमाओं की थी। दारूल उलूम देवबंद सर्वोच्च शरियत अदालत है। उसने फतवा दिया कि इमराना किसी भी स्थिति में अपने पति के साथ नहीं रह सकती। वह और उसके पति विवाहित नहीं रह सकते। एक ही घर में नहीं रह सकते। मामला तूल पकड़ता गया। और ऑल इण्डिया मुस्लिम पसर्नल लॉ बोर्ड भी इमराना प्रकरण में कूद पड़ा। और उसने भी दारूल उलूम देवबंद के फैसले के प्रति सहमति जताई। बीच में इमराना के भाई भी उसके साथ खड़े होने से कतराते रहे। वह पंचायत और उलेमाओं के फैसलों के खिलाफ खड़े होने की हिम्मत नहीं कर सके। लेकिन वे इतने क्रुद्ध थे कि उन्होंने जाकर बलात्कारी अली मोहम्मद की अच्छी पिटाई कर दी। इमराना के एक भाई ने एफआईआर दर्ज कराई। अली मोहम्मद को गिरफ्तार कर लिया गया। उसको मुजफ्फरनगर की अदालत में लाया गया। अदालत ने उसे दो हफ्ते के लिए न्यायिक हिरासत में भेज दिया। ऐसे जघन्य मामलों में भी अनेक मुस्लिम उलेमा और मजहबी इस बात पर अड़े हुए हैं कि यह मामला पूरी तरह मुसलमान समाज का है और दारूल उलूम देवबंद का फैसला ही लागू होना चाहिए। क्या अर्थ है इसका कि भारत की शासन भारतीय दण्ड संहिता का कोई दखल नहीं हो सकता? क्या ऐसे मामलों में भी राज्य की पुलिस और प्रसासन व्यवस्था अधिकारहीन बनी रह सकती है क्योंकि यह मुस्लिम समाज का अन्दरूनी मामला है? इस्लाम के अनेक बड़े विचारक यह मानते हैं कि यह भारतीय दण्ड संहिता का मामला है। इनमें दारूल उलूम या ऑल इण्डिया पसर्नल लॉ बोर्ड की कोई भूमिका नहीं हो सकती है। ऐसा मानने वाले लोगों में इस्लाम के प्रतिष्ठित विद्वान मोहम्मद वहीदुद्दीन खान भी हैं। उन्होंने चैनलों में जाकर और मीडिया के अन्य माध्यमों से अपनी इस राय को स्पष्ट रूप से रखा है। उन्होंने यह भी कहा है कि इस्लाम में कई छोटे शरियत स्कूलों के अलावा पांच प्रमुख शरियत स्कूल हैं। दारूल उलूम देवबंद का फैसला हनफी शरियत के मुताबिक दिया गया है। मोहम्मद वहीदुद्दीन इससे असहमत थे।

मीडिया का रवैया शुरूसे प्राय: सेक्युलेरिया से ग्रस्त रहा। घटना के कई दिन बाद अंग्रेजी के सिर्फ एक अखबार ने इसे प्रमुखता से उठाया। दिल दहला देने वाली अन्यायी व्यवस्था के खिलाफ आवाज को दबाया नहीं जा सका। घटना के दो हफ्ते बाद राष्ट्रीय महिला आयोग की अध्यक्ष गिरिजा व्यास ने अपने बयानों में कहा, ''मुझे इस्लाम पर पूरा यकीन है। यह महिलाओं पर ऐसे अत्याचारों की अनुमति नहीं देता। फिर भी स्थानीय पंचायत ने इस मामले को देखा। हम मांग करतें हैं कि सरकारी अदालत में इसका मामला चले।'' अलबत्ता राज्य सरकार से इन्होंने रिपोर्ट तलब की। राज्य में सरकार है मुलायम सिंह की। वे मुस्लिम वोट बैंक की राजनीति करने से इस जघन्य मामले में भी नहीं चूके। मुख्यमंत्री मुलायम सिंह ने कहा है कि मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड और दारूल उलूम देवबंद ने जो फैसला किया है, वह कुछ सोच समझ कर ही किया होगा। घटना लेना चाहते हैं। उनके इस भोलेपन पर कौन कुर्बान नहीं होगा? अलबत्ता देश के महिला संगठनों ने इमराना के इस भयानक प्रकरण पर अत्याचार से पीड़ित महिला का खुलकर साथ दिया। भारत के संविधान निर्माताओं को इस समस्या का अच्छी तरह अभास था। फिर भी इसका दो टूक फैसला करने की बजाए समान नागरिक संहिता के बनाने की जिम्मेदारी सरकार पर छोड़ दी।

आज समान नागरिक संहिता अधर में लटकी है। आए दिन ऐसे मामले होते हैं। सर्वोच्च न्यायालय ने कई बार सरकार को इसे कानूनी जामा पहनाने का आग्रह किया है। भारतीय जनता पार्टी ने तो इसे बहुत बड़ा मुद्दा बना रखा था। राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन के बनते समय इसे उसको स्थगित करना पड़ा। इमराना के इस प्रकरण में मार्क्सवादी पार्टी के नए महासचिव प्रकाश कारत ने खुलकर पक्ष लिया है। यह कहना कठिन है कि पार्टी का रुख समान नागरिक संहिता के बारे में बदला है या नहीं। यह जेंडर जस्टिस या नारी के साथ न्याय का व्यापक मामला है। एक पूरे समुदाय के नारी समाज के अधिकारों का मामला है। यह नहीं कि ऐसे दकियानूसी प्रचलन हिन्दू समाज में नहीं है। आज भी हिन्दू समाज की जातीय पंचायतें कई बार ऐसे बर्बर फैसलें करती हैं कि जिससे पूरा समाज शर्मसार हो जाता है। पिछली आधी सदी तक समान नागरिक आचार संहिता के एक लंगड़े तर्क के आधार पर रोका गया है। तर्क यह है कि समाज सुधार के मामले समाज के अन्दर से ही उठने चाहिए। मुस्लिम समाज की सहमति के बिना उनके ऊपर समान नागरिक संहिता लादी नहीं जा सकती।

इमराना प्रकरण में तो स्वयं महत्वपूर्ण इस्लामी उलेमाओं में भी भारी मतभेद उभर कर सामने आए। बड़ी संख्या में मुस्लिम बुद्धिजीवी और मान्य विद्वान इमराना के पक्ष में खड़े हुए। फिर भी कट्टरपंथी मुल्लाओं की जिद बची हुई है। इमराना के सवाल पर आज भी एक सर्वेक्षण के मुताबिक दस-ग्यारह प्रतिशत लोग यह मानते हैं कि यह मुस्लिम समाज का आन्तरिक मामला है और उसमें सरकार को दखल नहीं देना चाहिए। अर्थात शरियत के हिसाब से जो फैसला हो हो, पूरे देश को इसे बर्दाशत करना चाहिए जबकि देश के करीब ९० प्रतिशत लोग इमराना प्रकरण में सरकारी न्यायतंत्र के काम करने के पक्ष में है। अब समय आ गया है जब वोट बैंक की राजनीति से ऊपर उठकर एक समुदाय के पूरे नारी समाज के न्याय के सवाल पर साहसी फैसला किया जाना चाहिए।